SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

ग्रामीण पुर्ननिर्माण में ग्रामीण विकास की सार्थकता

पिन्टु कुमार पाण्डेय, विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग,
पारसनाथ महाविद्यालय, इसरी बाजार, गिरिडीह, झारखंड, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
पिन्टु कुमार पाण्डेय,
विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग,
पारसनाथ महाविद्यालय, इसरी बाजार,
गिरिडीह, झारखंड, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 23/12/2020
Revised on : -----
Accepted on : 30/12/2020
Plagiarism : 01% on 23/12/2020

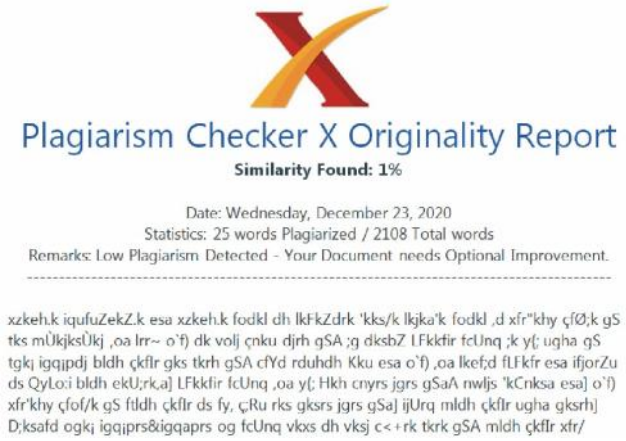
Plagiarism Checker X Originality Report
Similarity Found: 1%

Date: Wednesday, December 23, 2020
Statistics: 25 words Plagiarized / 2108 Total words
Remarks: Low Plagiarism Detected - Your Document needs Optional Improvement.

xzkeh.k iqufuZekZ.k esa xzkeh.k fodkl dh lkFkZdrk 'kks/k lkjka'k fodkl ,d xfr"khy çfØ;k gS tks mÙkjksÙkj ,oa lrr~ o`f) dk volj çnku djrh gSA ;g dksbZ LFkkfir fcUnq ;k y{; ugha gS tgkj igqipdj bldh çkfIr gks tkrh gSA cfYd rduhdh Kku esa o`f) ,oa lkef;d fLFkfr esa ifjorZu ds QyLo:i bldh ekU;rk,a] LFkkfir fcUnq ,oa y{; Hkh cnyrs jgrs gSaA nwljs 'kCnksa esa] o`f) xfr'khy çfof/k gS ftldh çkfIr ds fy, çRu rks gksrs jgrs gSa] ijUrq mldh çkfIr ugha gksrh] D;ksafd ogkj igqiprs&igqaprs og fcUnq vkxs dh vksj c<+rk tkrk gSA mldh çkfIr xfr/

शोध सार

विकास एक गतिशील प्रक्रिया है, जो उत्तरोत्तर एवं सतत् वृद्धि का अवसर प्रदान करती है। यह कोई स्थापित बिन्दु या लक्ष्य नहीं है, जहाँ पहुँचकर इसकी प्राप्ति हो जाती है। बल्कि तकनीकी ज्ञान में वृद्धि एवं सामयिक स्थिति में परिवर्तन के फलस्वरूप इसकी मान्यताएं, स्थापित बिन्दु एवं लक्ष्य भी बदलते रहते हैं। दूसरे शब्दों में, वृद्धि गतिशील प्रविधि है, जिसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न तो होते रहते हैं, परन्तु उसकी प्राप्ति नहीं होती, क्योंकि वहाँ पहुँचते–पहुँचते वह बिन्दु आगे की ओर बढ़ता जाता है। उसकी प्राप्ति गति परिवर्तन को अवरूद्ध कर देगा, तकनीकी ज्ञान एवं विकास को सीमित कर देगा। इस तरह कहा जा सकता है कि गति परिवर्तन ही विकास है। यहाँ विकास का सम्बन्ध गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों तरह के परिवर्तनों से है।

मुख्य शब्द

ब्रिटिश शासनकाल, अर्थव्यवस्था, ग्रामीण विकास, स्वतन्त्रता आन्दोलन, किराया एवं राजस्व।

प्रस्तावना

ब्रिटिश शासनकाल में देश में स्वतन्त्र अर्थव्यवस्था का दर्शन लागू था। वही सरकार सर्वोत्तम मानी जाती थी, जो आर्थिक क्षेत्र में कम–से–कम हस्तक्षेप करती थी। अतः विदेशी सरकार ने अपने शासन के शुरू के अवधि में ही बार–बार अकाल पड़ने के चलते मानवता के दृष्टिकोण से थोड़ी रूचि लेनी शुरू की। 1858 ई. के बाद कुछ जिलाधिकारियों ने खाद्यान्न के गोदाम को नियंत्रित करके गरीबों के बीच बँटवाने की व्यवस्था की थी, लेकिन इस नियंत्रण के पीछे कोई वैधानिक स्वीकृति नहीं थी। इसकी स्वीकृति एवं वैधानिकता बाद में प्रदान की गयी। बी. बी. मिश्रा ने इसे स्वतंत्र अर्थव्यवस्था की वैकल्पिक व्यवस्था कहा। फेमीन आयोग 1880 ने पहली

बार उस अकाल में सक्रिय रूप से भाग लने के लिए सिफारिश की थी। आयोग ने भूमि–सुधार, प्रशासनिक व्यवस्था, कृषि–सुधार, रेलवे निर्माण, संचार की व्यवस्था, नहर पद्धति के विकास एवं अन्य सुरक्षात्मक कार्य करने को कहा था। आयोग ने यह भी माना था कि सामान्य अवधि में कृषि समृद्धि ही सुखा एवं अकाल से सुरक्षा का सर्वोत्तम तरीका है। कुछ ही वर्ष पूर्व लेकिन **रायट् आयोग** 1873–74 ने सामुदायिक कल्याण की दृष्टि से सरकार के स्वतन्त्र अर्थव्यवस्था की नीति के समक्ष प्रश्न चिह्न खड़ा कर दिया था ।

सर्वप्रथम 1866 में अकाल आयोग ने कृषि विभाग को अलग करने के लिए प्रस्ताव दिया था, परन्तु अकाल की समस्या को गम्भीरता से जानने के लिए कृषि सम्बधित आंकड़ों को एकत्र करने की एकमात्र व्यवस्था की गयी। 1880 में भारत सरकार ने प्रान्तीय विभागों के समक्ष वही प्रस्ताव दिया। प्रान्तीय विभागो ने कृषि आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए जगह–जगह विभागीय कार्यालय खोले। इसी बीच कृषि विकास के छोटे–छोटे प्रयास भी किये गये, लेकिन वह वास्तविक शुरूआत नहीं कही जा सकती। कृषि विभाग की शुरूआत भारत के वायसराय लाट कर्जन 1901–05 की दुरदर्शिता से हुई, जिन्होंने इसके प्रशासनिक स्थापना का सुझाव दिया। उन्होने केन्द्रीय शोध–संस्थान की सिफारिश की, जिसके फलस्वरूप पुसा (बिहार) की स्थापना हुई, इसके साथ ही हर क्षेत्र में शोध के लिए कृषि फर्मो की स्थापना की गयी, साथ ही 1906 में भारतीय कृषि सेवा का भी गठन किया गया। कृषि विभाग का सर्वप्रथम कार्य इंग्लैण्ड के साथ रूई का व्यापार करना था शुरू हुआ। इंगलैण्ड ने रूई की खेती पर अधिक बल देने के लिए एवं प्रत्येक राज्य में अलग कृषि, राजस्व एवं व्यापार का भारतीय सरकार का विभाग खुला। 1879 तक विभाग से कार्य किया और वित्तीय कठिनाइयों के चलते बाद में इसका विभाजन हो गया। इस तरह कहा जा सकता है कि ब्रिटिश सरकार ने अपने उपनिवेशवाद के हित में ग्रामीण विकास की बात सोचना शुरू किया था। स्वतन्त्रता आन्दोलन के क्रम में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करने के बाद ग्रामीण विकास को विशेष समर्थन मिला। अफ्रीका से आने के बाद 1920 में उन्होने असहयोग आन्दोलन की शुरूआत की, जिसके माध्यम से उन्होने ग्रामीणों को जागृत किया। काँग्रेस के कलकत्ता सम्मेलन 1920 में यह प्रस्ताव परित किया गया कि उन लाखों घरों में पुनः हस्तकरघा द्वारा कताई एवं बुनाई शुरू की आयेगी, जिन्हें समाप्त कर दिया था ।

खादी स्वतन्त्रता की पहचान बन गयी थी और ग्रामीण विकास के क्रम में यह पहली परियोजना थी। इसके अतिरिक्त महात्मा गाँधी ने कुटीर उद्योग के विकास, छुआ–छुत उन्मूलन, बुनियादी एवं व्यस्क शिक्षा, नसबन्दी, महिला जागरण और राष्ट्रीय भाषा के प्रचार जैसे कार्यक्रमों को भी लागू करने पर बल दिया, जिसके लिए स्वेच्छा से कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं की एक सेना तैयार की। ''गाँवों की ओर चलों'' आन्दोलन ने शीघ्र ही जोर पकड़ लिया और इसके कार्य चलने लगे। रविन्द्र नाथ टैगोर ने श्रीनिकेतन, ग्रामीण पूर्णनिर्माण संस्थान की शुरूआत 1921 में की, जिसका उद्देश्य आत्मनिर्भरता और आत्मसम्मान प्राप्त करना था। उसी वर्ष मद्रास में याँगमैनक्रिश्चियन एसोशियेसन ने "मारटन्डम'' का प्रयोग शुरू किया। इसका भी उद्देश्य ग्रामीण लोगों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एंव आर्थिक विकास करना था। ये सारे प्रयास ऐच्छिक थे, परन्तु इसके फलस्वरूप सरकार का भी ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। एफ. एल. बजे, गुरूगाँव के जिलाधीश ने 1927 में ग्रामीण विकास की एक योजना शुरू की जो पुराने मूल्यों जैसे कठिन परिश्रम एवं प्रयास, आत्मसम्मान एवं आत्मनियंत्रण, आपसी सहयोग एवं सम्मान पर आधारित था। इसी तरह का प्रयास 1932 में बड़ौदा राज्य द्वारा भी शुरू किया गया। ग्रामीण विकास को एक विशेष बल तब मिला जब 1921 में भारत सरकार अधिनियम 1919 के अन्तर्गत "दयारची'' (Dyarchy) जैसी योजना प्रत्येक राज्यों में लागू की गयी। इसके अन्तर्गत राज्य के विषयों को सुरक्षित एवं ''स्थानान्तरित'' कर दो भागों में बाँटा गया। सुरक्षित विषयों के अन्तर्गत कानून एवं व्यवस्था और राजस्व (भूमि राजस्व एवं जोताधिकार सहित) जैसे विषय रखे गये, जबकि कृषि, सार्वजनिक शिक्षा, स्वास्थ्य, सहयोग, स्थानीय सरकार, पशुपालन जैसे विषय स्थानान्तरित सूची में। 'मंटागों केम फोर्ड' प्रतिवेदन के अनुसार वैसे विभागों को शामिल किये जाना चाहिए, जिनके लिए स्थानीय जानकरी एवं सामजिक सेवा उपलब्ध हो, भारतीय लोग उसके लिए स्वयं इच्छुक हो और जिनका विकास अत्यावश्यक हो। स्थानान्तरित सूची निर्वाचित मंत्रियों के अन्तर्गत रखा गया, वैसे तो उन मंत्रियों पर बहुत अधिक प्रतिबन्ध था, परन्तु स्थानान्तरित सूची की अपनी विशेषताएँ थीं। सरकार भी इस सूची के अन्तर्गत ग्रामीण विकास

को प्रोत्साहित कर रही थी। राष्ट्रीय ग्रामीण विभाग की प्रान्तीय व्यय को भी 1921 और 1940 के बीच बहुत अधिक बढ़ाया गया, जिसके अन्तर्गत शिक्षा, चिकित्सा सेवाएँ, सार्वजनिक स्वास्थ्य, कृषि और उद्योग शामिल था। इन विषयों पर खर्च की जाने वाली राशि 1921 में 240 लाख थी, जिसे बढ़ाकर 1939–40 में 387 लाख कर दिया गया। इसमें सबसे अधिक शिक्षा पर व्यय किया गया। भारतीय सरकार अधिनियम 1919 ने भी ऐसी सभी सेवाओं का प्रान्तीयकरण कर दिया। ऐसी सेवाएँ "दायरवी'' के अन्तर्गत शामिल थी और रॉयल आयोग द्वारा अनुशंसित थीं। इनमें मुख्य भारतीय शिक्षा सेवा, कृषि सेवा, इंजिनियरिंग सेवा, चिकित्सा सेवा और इंजिनियरिंग सड़क एवं भवन सेवा भी शामिल थी। 1925 के बाद इन सेवाओं को अखिल भारतीय सेवाओ की सूची से अलग कर दिया गया और प्रान्तीय सरकार के नियंत्रण में चिकित्सा पर 37 लाख, सार्वजनिक स्वास्थ्य पर 24 लाख, कृषि पर 81 लाख और उद्योग पर 30 लाख रूपये व्यय किया गया था।

भारत सरकार अधिनियम 1933 में ग्रामीण विकास सम्बन्धी क्रियाओं के सम्बन्ध में, प्रान्तीय सरकारों को स्वायतत्ता प्रदान कर अधिकांश राज्यों में विकास का एक नया विभाग ही स्थापित कर दिया गया, साथ–ही से 7 राज्यों मे (असाम, बिहार, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, मद्रास, बाम्बे एवं केन्द्रीय प्रान्त) कॉंग्रेस पार्टी बहुमत में आयी। करीब दो वर्षों बाद (1937–39) सरकार में रही और इसी बीच ग्रामीण विकास सम्बन्धी कई योजनाओं के कॉंग्रेस के मंत्रियों ने त्याग पत्र दे दिया, जिससे ग्रामीण विकास को एक झटका लगा। फलस्वरूप सब कुछ अधिकारियों के हाथ में आ गया। परन्तु खाद्यान्न की स्थिति ने भारत में ग्रामीण विकास के लिए बाध्य कर दिया और इस दिशा में नये ढंग से सोचने के लिए सरकार विवश हो गयी। खाद्यान्न एवं चारा की आपूर्ति में वृद्धि कर सैनिकों की माँग की पूर्ति करना जरूरी हो गया। इसकी वृद्धि के लिए सरकार ने प्रान्तों को आवश्यक कदम उठाने के लिए निर्देश दिया। फलस्वरूप मुफ्त बीज दिये जाने लगे, कुओं एवं बाँधों के निर्माण के लिए सहायता दी जाने लगी, रसायनिक खादों की आपूर्ति होने लगी, किराये एवं राजस्व में छुट दी गयी। खाद्यान्न के एक न्यूनतम मूल्य को निर्धारित किया गया और नकदी फसलों के क्षेत्र में कमी की गयी। स्पष्ट है कि उपर्युक्त सारी सुविधाएँ युद्ध को दृष्टि में रखकर की गयी थी। 1943 के बाद बंगाल अकाल ने भी "अधिक अन्न उपजाओं'' के नारे को अधिक महत्व दे दिया। साथ ही बर्मा जहाँ चावल की अधिक उपज होती थी, जापान के हाथों में चला गया। खाद्यान्न का उत्पादन और अधिक आवश्यक हो गया, और युद्ध के बाद पुनःनिर्माण नियोजित विकास की नीति ने खाद्यान्न के उत्पादन को और अधिक महत्पवूर्ण बना दिया। इस तरह द्वितीय विश्वयुद्ध एवं अकाल जैसे कई महत्पूर्ण तथ्यों ने ग्रामीण विकास की ओर सरकार का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया। 1945 में जब द्वितीय विश्वयुद्ध का समापन हुआ, देश में संवैधानिक एवं राजनितिक परिर्वतन हुए, और 1935 के अधिनियम के अर्न्तगत 1945 में चुनाव की घोषणा की गयी। वैसे तो सम्पूर्ण भारत में गरीबी फैली हुई है, भुमि पर जातित्व का दबाव एवं धनोर्पाजन के अन्य तरीको की कमी, ग्रामीण क्षेत्रो की मुख्य समस्याएँ है। उसमें यह भी तर्क किया गया की ब्रिटिश साम्रराज्य की अवधि में भारत का तीव्र गति से ग्रामीणकरण हुआ है, कार्य एवं रोजगार के कई स्त्रोत बन्द कर दिये गये और एक बड़ी जनसंख्या को भुमि पर आश्रित करने के लिए थोप दिया गया है। फलस्वरूप जोत का विभाजन एवं उपविभाजन होता गया और अन्त में वह अनार्थिक हो गयी। अतः भुमि और उससे संबंधित समस्याओं को विकास के क्रम में प्राथमिकता दी जायेगी। उसमें यह भी प्रतिज्ञा की गयी कि खेती को वैज्ञानिक आधार दिया जाएगा, जिससे अधिकत्तम रोजगार उपलब्ध हो सके और भुमिहीन किसानों की समस्याओं की निदान हो सके। इसके लिए भुमि सुधार पर भी बल दिया जायेगा, जिसमें सरकार और किसानों के बीच के बिचौलियों को समाप्त करने को कहा गया। कॉंग्रेस पार्टी ने उत्साह में सहकारी खेती भी शुरू करने की बात कही एवं सहकारिता के माध्यम से ग्रामीण ऋणग्रास्तता के उन्मुलन के लिए सस्ते दर पर साख उपलब्ध कराने की भी बात कही गई, इसी तरह ग्रामीण विकास नई सरकार के लिए सबसे महत्पवूर्ण विषय बन गया। 1947 में जब देश आजाद हुआ, ग्रामीण विकास की आन्दोलन की गति पूर्वतः बनी रही और उसमें तकनीकी विकास एवं आधारभूत सुविधाये कराने की बाते जोड़ी गयी।

निष्कर्ष

स्वतन्त्रता के पश्चात् राष्ट्रीय सरकार ने ग्रामीण विकास के दृष्टि से जमींदारी प्रथा का उन्मूलन कर भूमि सुधार के कई कारगर उपायों को लागू किया। ग्रामीण गरीबों एवं समृद्धों के बीच की खाई को पाटने के लिए विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के तहत ग्रामीण विकास परियोजनाओं के रूप में सामुदायिक विकास योजना, गहन कृषि योजना, पैकेज प्रोग्राम के साथ कृषि विकास की कई योजनाएं लागू की गयी। उस समय तक ग्रामीण विकास का अर्थ कृषि विकास के साथ अधिक जोड़ा जाता था, परन्तु इसका परिणाम उल्टा ही हुआ। उन्नत बीज, खाद एवं गहन कृषि के तहत बड़े कृषक और बड़े होते गये और छोटे कृषक और छोटे होते गये। साथ ही कृषि श्रमिकों की स्थिति बदत्तर होती गयी। इसको दृष्टि में रखकर पुनः एस.एफ.डी.ए., एम.एफ.ए.एल., एन.आर.ई.पी. तथा समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम जैसी कई रोजगार युक्त योजनाएं शुरू कर ग्रामीण गरीबों में अतिशः पिछड़े वर्ग को उठाने का प्रयास किया गया और आर्थिक समानता कायम कर समाजवादी समाज की संरचना पर बल दिया गया। नौवी पंचवर्षीय योजना की परिपक्वता के बाद दसवीं योजना लागू की गयी है, परन्तु सतह पर इन परियोजनाओं का प्रभाव स्पष्ट नहीं हो रहा है। आज भी करीब आधी जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन कर रही है। सरकारी नियोजन निरर्थक साबित हो रहे हैं। आलोचक इसे एक असफल प्रयास ही मान रहे हैं, परन्तु वस्तुस्थिति ऐसी नहीं है। देश के कई राज्यों में विकास की गति तेज हो रही है, और आर्थिक दृष्टि से वे राज्य बिना बताये समृद्ध नजर आ रहे हैं। दूसरी तरफ कुछ राज्यों में विनियोग तो हुए हैं, परन्तु किसी–न–किसी कारण से उसके उद्देश्य पूरे नहीं हो सके और गरीबी अभी भी बनी हुई है। इस तरह इस शोध का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण विकास एवं उसके अवरोधकों को पहचानना एवं उसे दूर करने के लिए समुचित सलाह देना है। ग्रामीण वातावरण विषाक्त बनता जा रहा है और ग्रामीण समाज आपस में विभक्त होता जा रहा है।

संदर्भ सूची

1. Mohsin, N., (1985), *Rural Development through Government programmes*, Mittal Publication, Delhi. Agriculture financing in India.
2. Mehta, Shiv, R., *Rural Development Policies and Programmes*, Sage Publication, New Delhi.
3. Maheshwari, S.R., (1985), *Rural Development in India, A public policy Approach*, Sage Publication, New Delhi, 1985
4. राघवन, के. विजय, *रूरल्स डेम्लपमेन्ट टाइम्स इण्डिया,* 26.11.2005 टाइम्स ऑफ इण्डिया, नईदिल्ली।
5. *भारत में मण्डी नियम का विकास योजना* (हिन्दी) 16 मार्च 2002 प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नईदिल्ली।
6. Kumar, Jyoti, *Integrated Rural Development: Perspectives and prospects*, Mittal publication, Delhi.
7. Srivastva. M., *Rural Development in India*, A.K. Singh Deep and Deep Publication, New Delhi.

****